Journal of Advances and Scholarly Researches in Allied Education
Vol. 19, Issue No. 2, March-2022, ISSN 2230-7540

भारतीय समाज में मूल्य शिक्षा की उपयोगिता

डॉ. सत्येन्द्र सिंह[1*], डॉ. विपिन कुमार[2]

[1] एसो॰ प्रोफेसर, समाजशास्त्र विभाग, जनता वैदिक कॉलिज, बड़ौत (बागपत),

मोः 9410048279

ई-मेल satyendra.jvc@gmail.com

[2] समाजशास्त्र विभाग कॉलिज ऑफ एजुकेशन, बिलासपुर, गौतमबुद्धनगर

मो.9058133395

सार - अति प्राचीन काल में मनुष्य जीवन जीता था। तब उपे जीवन के लिए संघर्ष करना पड़ता था। उस समय शक्तिशाली ही जीवित रह प्कता था। अतः मनुष्य को अपना बल बढ़ाना होता था। तब सम्भवतः संघर्ष और शक्ति, ये ही उसके जीवन मूल्य रहे होंगे। धीरे-धीरे मनुष्य प्राकश्तिक जीवन सामाजिक जीवन की ओर अग्रसर हुआ, ऐसे सामाजिक जीवन की ओर जिसमें संघर्ष और शक्ति के स्थान पर प्रेम, सहानुभूति और प्हयोग का महत्व था, जिसमें निर्बल लोगों का जीवन भी सुरक्षित हुआ। प्रेम, सहानुभूति और सहयोग को हम मूलभूत सामाजिक नियम, आदर्श, सिद्धान्त मानदण्ड अथवा मूल्यों की संज्ञा दे प्कते हैं। पर जैसे-जैसे हमने अपना विकास किया हमारे समाज का संलिष्ट होता चला गया, उसके विभिन्न आयाम विकसित हुए- समाजिक, सस्कृतिक, धार्मिक, राजनैतिक और आर्थिक, सिद्धान्त, नैतिक नियम और व्यवहार मानदण्ड विकसित हुए।

----------X----------

परिचय

किसी समाज में विश्वास, आदर्श, सिद्धान्त, नैतिक नियम और व्यवहार मानदण्डों का विकास एक दिन में नहीं होता, ये मनुष्य के दीर्घ अनुभवो के परिणाम होते हैं। तब दीर्घ अनुभवों के आधार पर इनमें परिवर्तन भी होना चाहिए। इससे मूल्यों के सम्बन्ध में दो तथ्य और स्पष्ट होते हैं- एक यह कि मूल्य युग-युग के अनुभव का परिणाम होते हैं और दूसरा यह कि ये परिवर्तनशील होते हैं। अन्त में विचार करें मूल्यों को सीखने की प्रक्रिया के बारे में। इन्हें मनुष्य सामाजिक क्रियाओं में भाग लेते हुए सीखते एवं धारण करते हैं। मूल्यों के सम्बन्ध में एक तथ्य और उल्लेखनीय है और वह यह कि ये किसी समाज की पहचान होते हैं और हर समाज अपने मूल्यों की रक्षा करना चाहता है।

मूल्य का शाब्दिक अर्थ- उपयोगिता, वांछनीयता, महत्व। सामान्यतः किसी समाज में जिन आदर्शों को महत्व दिया जाता है और जिनसे उस समाज के व्यक्तियों का व्यवहार निर्देशित एवं नियन्त्रित होता है उन्हें उस समाज के मूल्य कहते हैं। अतः स्पष्ट रूप से कहा जा सकता है कि किसी समाज के वे विश्वास, आदर्श, सिद्धान्त, नैतिक नियम और व्यवहार मानकदण्ड जिन्हें समाज के व्यक्ति महत्व देते हैं उस समाज एवं उसके व्यक्तियों के मूल्य होते हैं।

मूल्य शिक्षा और उसकी आवश्यकता

मूल्य शिक्षा की आवश्यकता तो सदैव से रही है, आज भी है और कल भी रहेगी। आज तो इसकी बहुत अधिक आवश्यकता है।

1. सर्वप्रथम बात तो यह है कि बिना मूल्यों के मनुष्य का व्यवहार निश्चित नहीं हो सकता, नियमित नहीं हो सकता। मनुष्य के आचार-विचार को सही दिशा देने के लिए मूल्य शिक्षा आवश्यक होती है।

2. दूसरी बात यह है कि आज हमारे देश में नहीं पूरे संसार में मूल्यों में ह्रास हो रहा है। मूल्यों में ह्रास का अर्थ है समाज द्वारा स्वीकृत आदर्श एवं मानदण्डों की अपने अन्तःकरण में न उतारना और उनके

www.ignited.in

अनुसर आचरण न करना। हमारे देश की तो अजीब स्थिति है, हम पुराने मूल्य छोड़ते जा रहे हैं और नए मूल्य निश्चित नहीं कर पा रहे हैं। अतः आज मूल्य शिक्षा अति आवश्यक है।

3. मूल्य शिक्षा के तीन पद होते हैं- संज्ञानात्मक, भावात्मक और क्रियात्मक। आज स्थिति यह है कि हमें मूल्यों का ज्ञान तो है परन्तु वे हमारे भावात्मक पक्ष के अंग नहीं है। तब उनके अनुसार आचरण करने का प्रश्न ही नहीं उठता। आज आवश्यकता है मूल्यों को भावना में उतारने की, उन्हें आचरण का आधार बनाने की। अब यह कार्य सभी सामाजिक संस्थाओं को मिलकर करना होगा।

4. हमारे समाज में बच्चे-बच्चे की जबान पर सत्य, अहिंसा और ब्रह्मचर्य विराजमान है। प्रेम, दया, दान, सहयोग और सेवा, इन सबसे भी हम परिचित हैं। आज हमारे देश में लोकतन्त्र है। विधायक, सांसद और मन्त्री सभी गोपनीयता एवं राष्ट्रहित की कसम खाते हैं। पर इन कसमों पर कितने लोग अमल करते हैं। किसी भी विभाग में झाँक कर देखिए तो काम कम और रिश्वत अधिक दिखाई देगी। सब एक-दूसरे का शोषण करने पर उतारू है। आखिर यह सब क्यों हो रहा है। इसका एक ही उत्तर है- मूल्यों का अभाव। तब मूल्य शिक्षा की व्यवस्था होनी ही चाहिए।

5. मूल्यों के अभाव में भाषा अर्थहीन हो गई है, व्यवहार अनिश्चित हो गया है, लोगों का एक-दूसरे से विश्वास उठ गया है, सब एक-दूसरे को शंका की दृष्टि से देख रहे हैं, समाज में अराजकता का नंगा नृत्य हो रहा है और मनुष्य तनावपूर्ण जीवन जी रहा है। हमें लगता है कि यदि हम समय रहते नहीं चेते तो वह दिन दूर नहीं जब हम पुनः बर्बरता के युग में प्रवेश कर जाएँगे। यदि हम मानव सभ्यता और संस्कृति की सुरक्षा चाहते हैं तो हमें मूल्य शिक्षा पर बल देना होगा।

6. इस युग में हमारे देश सहित अन्य देशों में जितने भी शिक्षा आयोग और शिक्षा समितियों का गठन हुआ है, सभी ने किसी न किसी रूप में मूल्य शिक्षा की आवश्यकता पर बल दिया है। स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद हमारे देश में शिक्षा को समग्र रूप से देखने और उसमें सुधार हेतु सुझाव देने के लिए कोठारी आयोग (1964-66) का गठन किया गया। इस आयोग के प्रतिवेदन में मूल्य शिक्षा को पाठ्यक्रम का अभिन्न अंग बनाने की बात कही गई है।

मूल्यमीमांसा का अर्थ

मूल्यों के निर्धारक धर्म तथा संस्कृति है और इनका अर्थापन दर्शन करता है। इस प्रकार मूल्यों की पृष्ठभूमि दर्शन, धर्म एवं संस्कृति है। इसलिए मूल्यों की सार्वभौमिक परिभाषा देना और उनका अर्थापन करना कठिन है। प्रत्येक दर्शन मूल्यों का अर्थापन अपने ढ़ंग से करता है। समाज के अपने मूल्य होते हैं।

शाब्दिक अर्थ में मूल्य व्यक्ति के गुणो को महत्व देता है, जिससे व्यक्ति का महत्व बढ़ता है और समाज में आदर सम्मान होता है। यह गुण विशेषता आन्तरिक अथवा बाह्य हो सकती है।

मूल्यमीमांसा के अनुसार मूल्यों का अर्थ- मूल्यमीमांसा के अनुसार मूल्यों को मानदण्ड तथा निर्णायक कहते हैं। वह मानदण्ड भावात्मक तथा बौद्धिक होते हैं। इनका क्षेत्र मनोवैज्ञानिक नहीं है, अपितु दार्शनिक अधिक है। मूल्यों के आधार पर ज्ञान एवं अनुभवों की सार्थकता की परख हो जाती है। मूल्य दर्शन की पाठ्यवस्तु है, अपितु शिक्षा एवं दर्शन ही मूल्यों के सम्बन्ध में निर्णय ले सकते हैं और मूल्यों से ज्ञान की सार्थकता की परख भी की जाती है।

मूल्यों के सामाजिक अर्थ- मूल्यों का विकास सामाजिक स्वरूप के अन्तर्गत धीरे-धीरे समाज के सदस्यों की अन्तःप्रक्रिया से होता है। अपनी जीविका के लिए समस्याओं का सामना करना होता है। समाज के अन्य व्यक्तियों के साथ उसे सहयोग करना तथा उत्तरदायित्वों का निर्वाह करना होता है। अपनी संस्कृति के अनुरूप व्यवहार करना होता है। इस प्रकार बिना सामाजिक मूल्यों के सामाजिक प्रणाली में शान्ति का अनुरक्षण करना सम्भव नहीं होगा। माननीय अनुभवों एवं अस्तित्व से मूल्यों की प्राप्ति की जाती है, जिन्हें सामाजिक 'मानक' भी कहते हैं।

मूल्यों का शैक्षिक अर्थ- शिक्षा के मूल्यों का सम्बन्ध उन क्रियाओं से होता है, जो अच्छी, उपयोगी तथा मूल्यवान होती है। एडम्स के अनुसार शिक्षा को द्विपद्वीय प्रक्रिया मानते हैं- एक पद शिक्षक तथा दूसरा पद छात्र होता है। शिक्षा विभिन्न प्रकार की प्रविधियों का उपयोग करके छात्रों में अपेक्षित व्यवहार परिवर्तन लाता है। वह जिसको उपयोगी तथा मूल्यवान समझता है उनकी सहायता से समुचित वातावरण का सृजन करता है। छात्र जिन्हें मूल्यवान समझता है उनमें

क्रियाशील होता है। शिक्षक एवं छात्र उन्हीं क्रियाओं में सहभागी होते हैं जो शिक्षा की दृष्टि से उपयोगी एवं मूल्यवान होते हैं।

समाजशास्त्री मूल्यों का सम्बन्ध समाज के विश्वास, आदर्श, सिद्धान्त और सामाजिक मानदण्डों से जोड़ते हैं। उनकी दृष्टि से किसी समाज के विश्वास, आदर्श, सिद्धान्त और व्यवहार मानदण्ड ही समाज के मूल्य होते हैं। इन्होंने स्पष्ट किया कि मनुष्य की अनेक आवश्यकताएँ होती हैं, वह उनमें से कुछ का चुनाव करता है और ये उसके लिए लक्ष्य बन जाता है। समाज इन आदर्शों से सम्बन्धित आदर्श नियम अथवा मानदण्ड समाज के सदस्यों के अन्तःकरण में आन्तरिक तत्व का रूप धारण करते हैं। भारतीय समाजशास्त्री डाॅ0 राधाकमल मुकर्जी ने मूल्यों को लक्ष्यों के रूप में ही परिभाषित किया है।

उनके शब्दों में- "मूल्य समाज द्वारा स्वीकृत उन इच्छाओं और लक्ष्यों के रूप में परिभाषित किए जा सकते हैं जिन्हें अनुबन्धन, अधिगत या समाजीकरण की प्रक्रिया द्वारा आभ्यान्तरीकृत किया जाता है और जो आत्मनिष्ठ अभिमान, मान तथा आकांक्षाओं का रूप धारण कर लेते हैं।"

उपर्युक्त चर्चा से मूल्यों की प्रकृति के विषय में निम्नलिखित तथ्य उजागर होते हैं-

1. मूल्य एक अमूर्त सम्प्रत्यय है। इनका सम्बन्ध मनुष्य के अन्तर्मन से होता है।

2. मूल्य किसी समाज द्वारा स्वीकृत विश्वास, आदर्श, सिद्धान्त, नैतिक नियम और व्यवहार मानदण्डों को व्यक्तियों द्वारा दिया गया महत्व है।

3. किसी समाज के विश्वास, आदर्श, सिद्धान्त, नैतिक नियम और व्यवहार मानदण्ड उसके दीर्घ अनुभवों का परिणाम होते हैं। तब मूल्यों पर भी यही बात लागू होनी चाहिए।

4. व्यक्ति में मूल्यों का विकास समाज की विभिन्न क्रियाओं (सामाजिक, सांस्कृतिक, धार्मिक, राजनैतिक एवं आर्थिक) में भाग लेने से होता है।

मूल्य प्रत्यय का पहला पद संज्ञानात्मक होता है, दूसरा भावात्मक और तीसरा क्रियात्मक। मनुष्य सर्वप्रथम अपने समाज के विश्वास, आदर्श, सिद्धान्त, नैतिक नियम और व्यवहार मानदण्डों को बिना सोचे-समझे स्वीकार करता है पर जैसे ही उसमें विवेक की जागृति होती है वह इनके औचित्य के बारे में सोचने लगता है। इस सोच के साथ ही उसमें मूल्यों का निर्माण शुरू हो जाता है। अब उसे इनमें से जो उचित लगते हैं वे उसकी भावना से जुड़ जाता है और भावना से जुड़ने के बाद वे उसके व्यवहार को प्रभावित करने लगते हैं। जब तक ये उसके व्यवहार को प्रभावित नहीं करते तब तक इन्हें मूल्य नहीं कहा जा सकता।

1. मूल्य शक्ति की पसन्द निर्भर करते हैं। कोई व्यक्ति किसी विश्वास, आदर्श, सिद्धान्त, नैतिक नियम और व्यवहार मानदण्ड को अधिक महत्व देता है और कोई किसी अन्य को।

2. मूल्य व्यक्ति के व्यवहार केा नियन्त्रित एवं निर्देशित करते हैं।

3. मूल्य व्यक्ति को सही-गलत, अच्छा-बुरा और करणीय-अकरणीय का निर्णय करने में सहायता करते हैं।

4. मूल्यों का पालन करने में व्यक्ति को सन्तोष मिलता है। मूल्यों की रक्षा के लिए लोग प्राण तक न्यौछावर कर देते हैं।

5. भिन्न-भिन्न समाजों के मूल्य भिन्न-भिन्न होते हैं, मूल्यों से ही उनकी पहचान होती है।

6. व्यक्ति, समाज और राष्ट्र सभी अपने मूल्यों की रक्षा करते हैं पर साथ ही आवश्यकता होने पर इनमें परिवर्तन भी करते हैं।

इस युग में मूल्यों पर सबसे अधिक चिन्तन मनोवैज्ञानिकों और समाजशास्त्रियों ने किया है। मनोवैज्ञानिकों ने मूल्यों को मनुष्य की रूचियों, अभिवृत्तियों और पसन्दों के रूप में लिया है। फ्ंिलक महोदय के अनुसार हम जिन मापदण्डों को पसन्द करते हैं और महत्व देते हैं और जिनके आधार पर हम अपना व्यवहार निश्चित करते हैं, वे ही हमारे लिए मूल्य होते हैं। उनके शब्दों में- "मूल्य मानक रूपी मानदण्ड है जिनके आधार पर मनुष्य अपने सामने उपस्थित क्रिया विकल्पों में से चयन करने में प्रभावित होते हैं।"

अतः राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 1986 में भी इस बात पर चिन्ता व्यक्त की गई है कि विद्यालय बच्चों में उचित मूल्यों का निर्माण करने में अक्षम है और इस बात पर बल दिया गया है कि विद्यालयों को अपने इस उत्तरदायित्व को पूरा करना चाहिए। इस बीच हमारे देश में नहीं अपितु अन्य देशों में भी मूल्य शिक्षा के सन्दर्भ में खूब विचार-विमर्श हुआ है और आज भी हो रहा है। इन सभी का एक ही निर्णय है और वह यह कि आज मूल्य शिक्षा की आवश्यकता है और इस दिशा में विद्यालयों को विशेष भूमिका निभानी चाहिए।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. डॉ आर.ए. शर्मा (2010), "शिक्षा के दार्शनिक एवं सामाजिक मूल आधार", गणपति प्रिन्टर्स चित्रकुट कॉलोनी, मेरठ।
2. डॉ. गिरिश पचैरी एवं रितु पचैरी (2014), "उभरते भारतीय समाज में शिक्षक की भूमिका", राधिका कम्प्यूटर्स जागृति विहार, मेरठ।
3. प्रमोद तिवारी (2007), "समाजशास्त्र क्या है", ज्ञान भारती पब्लिशर्स, इलाहाबाद।
4. डॉ. एस.एम. नागर एवं डॉ. संजीव महाजन (2005-06), "समाजशास्त्र का परिचय", रस्तोगी प्रिन्टर्स, मेरठ।
5. डॉ. रामशक्ल पाण्डेय (2008द्ध, शैक्षिक सम्बन्ध, विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा-2
6. शिक्षा नीति (1992)
7. "राष्ट्रीय शिक्षा आयोग" (1964), (कोठारी कमीशन आयोग)
8. ए0पी0जे0 अब्दुल कलाम, "सम्मान के लिये शिक्षा", योजना वर्ष 49, सितम्बर-2005, पृ.सं.-5-7
9. सुमन यादव, "शिक्षा से वंचित समाज को जोड़ने की कोशिश", कुरूक्षेत्र, वर्ष-57, अंक-7, मई-2011
10. उमर फारूखी, "शिक्षा हर बच्चे का मौलिक अधिकार कुरूक्षेत्र", वर्ष-57, अंक-2, मई-2011

Corresponding Author

डॉ. सत्येन्द्र सिंह *

एसो॰ प्रोफेसर, समाजशास्त्र विभाग, जनता वैदिक कॉलिज, बड़ौत (बागपत)